[2014] 4 एस. सी. आर 583

राम निरंजन रॉय

बनाम्

बिहार राज्य और अन्य

आपराधिक अपील सं. 1240/2004

31 मार्च, 2014

[न्यायमूर्तिगण रंजन प्रकाश देसाई और मदन वी. लोकुर]

न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971

धारा- 14-अदालत की अवमानना-उच्च न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होना और अदालत में चिल्लाना और अदालत के समक्ष गलत बयान देना-उच्च न्यायालय ने उसे अदालत की अवमानना का दोषी ठहराया और उसे हिरासत में लेने और सजा के रूप में 24 घंटे के लिए जेल भेजने का निर्देश दिया।अभिनिर्धारित किया। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को संबोधित करते समय अपीलार्थी द्वारा प्रयोग की गई असंयमी भाषा सबसे अधिक आपत्तिजनक और अवज्ञाकारी है। उन्होंने कोई पछतावा नहीं दिखाया-उन्होंने कोई माफी नहीं मांगी, लेकिन अपने अभद्र व्यवहार को जारी रखा। अदालत में चिल्लाते हुए और अदालत को फुसलाते हुए-इस व्यवहार से उन्होंने उच्च न्यायालय की गरिमा और अधिकार को कम किया-उन्होंने इसके प्रति पूर्ण अनादर दिखाते हुए उच्च न्यायालय की महिमा को चुनौती दी-निस्संदेह, उन्होंने इसकी उपस्थिति और सुनवाई में उच्च न्यायालय की अवमानना की-इसलिए, वे उच्च न्यायालय के सामने अवमानना करने के दोषी हैं-उच्च न्यायालय को अपीलकर्ता को दंडित करने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। न्यायालय की अवमानना के लिए अपीलार्थी-भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 215।

धारा- 2 (ग)-न्यायालय की आपराधिक अवमानना-उच्चतम न्यायालय के समक्ष उच्च न्यायालय के फैसले की प्रति दाखिल करते हुए उसमें शब्दों को बदलकर और गलत हलफनामा दायर करते हुए अपील करने वाला-अभिनिर्धारित कियाः अवमानना करने वाला उच्च न्यायालय के आदेश के साथ छेड़छाड़ करने और इसे सर्वोच्च न्यायालय में दायर करने का दोषी है-यह धारा- 2(ग) द्वारा परिभाषित आपराधिक अवमानना होगी। इसके अलावा उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष झूठा हलफनामा दायर किया-वह सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना का दोषी है-उन्हें 25 हजार रुपये का जुर्माना देने का निर्देश दिया जाता है। भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 129।

न्यायालय की अवमाननाः

अदालत के सामने अवमानना-अभिनिर्धारितःजब न्यायाधीश को बदनाम करने या अपमानित करने के लिए उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के सामने अवमानना की जाती है, तो तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता हो सकती है-अपीलार्थी को अपना बचाव करने का कोई अवसर देने का कोई सवाल ही नहीं था-स्वाभाविक न्याय-सुनने का अवसर।

जनहित में दायर एक रिट याचिका (2003 का C.W.J.C. No.1311) में, बिहार राज्य में कानून और व्यवस्था की समस्या से संबंधित कई मुद्दों को उठाते हुए, उच्च न्यायालय ने पुलिस महानिदेशक को थानागृह अधिकारियों से लेकर अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक तक के उन अधिकारियों की सूची बनाने का निर्देश दिया, जो चार साल से अधिक समय से अपने स्टेशन में हैं। अपीलार्थी, एक पुलिस उपाधीक्षक, और स्वयं को बिहार पुलिस सेवा संघ का अध्यक्ष होने का दावा करते हुए, एक हस्तक्षेप आवेदन दायर किया, जिसमें कहा गया कि बिहार पुलिस सेवा के अधिकारियों के स्थानांतरण और नियुक्ति बिहार सरकार के गृह विभाग द्वारा बनाए गए दिशानिर्देशों का उल्लंघन करते हुए मनमाने ढंग से की गई थी। उन्होंने उत्तरदाताओं को उक्त आदेश को लागू करने का निर्देश देने के आदेश के लिए बिहार राज्य के खिलाफ उनके द्वारा दायर एक रिट याचिका संख्या- 12225/1999 का उल्लेख किया। जो उच्च न्यायालय में

लंबित थे। उन्होंने आगे कहा कि रिट याचिका संख्या- 12225/1999 को रिट याचिका संख्या- 1311/2003 के साथ सुना जाना चाहिए, और रिट याचिका संख्या- 1311/2003 में उनके अभियोग के लिए प्रार्थना दिनांक 27/01/2004 को, अपीलार्थी उच्च न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ। कहा जाता है कि वह अदालत में चिल्लाया था।उच्च न्यायालय ने कहा कि अपीलार्थी ने अदालत का अपमान किया है।अपीलार्थी के अपमानजनक व्यवहार को देखते हुए, उच्च न्यायालय ने उसे न्यायालय अधिकारी और सार्जेंट द्वारा हिरासत में लेने का निर्देश दिया और सजा के रूप में एक दिन यानी चौबीस घंटे के लिए जेल भेज दिया।उनका हस्तक्षेप आवेदन खारिज कर दिया गया।

अपील का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया:1.1 अपीलार्थी यह धारणा बनाना चाहता है कि वह बिहार के पुलिस अधिकारियों के लिए लड़ रहा है, लेकिन सावधानी से। उसके आवेदन को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह अपने उद्देश्य का समर्थन कर रहा है। उच्च न्यायालय बिहार में कानून और व्यवस्था की स्थिति के सवाल पर विचार करते हुए राज्य की पुलिस अधिकारियों की नियुक्ति और स्थानांतरण की सरकार की नीति को देख रहा था, जाहिर है क्योंकि इसका सीधा असर पुलिस अधिकारियों की दक्षता और ईमानदारी पर पड़ता है। उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को एक सूची प्रस्तुत करने का निर्देश दिया था ऐसे अधिकारियो का जिन्हें चार साल से अधिक समय से उनके स्टेशन से नहीं हटाया गया था। मान लीजिए, अपीलार्थी कई वर्षों से पटना में तैनात है। अपीलार्थी उच्च न्यायालय द्वारा किए गए कार्य से नाखुश और परेशान था। यही कारण है कि उन्होंने रिट याचिका संख्या- 1311/2003 में हस्तक्षेप किया। [कंडिका 4-5] [590-एफ-जी, एच; 5 ~ 1-ए, बी-सी]

1.2 उच्च न्यायालय के विवादित आदेश की अन्तर्वस्तु अपीलार्थी के अशिष्ट व्यवहार को दर्शाती है। वह न्यायाधीशों पर चिल्लाया। अपीलकर्ता द्वारा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को संबोधित करते समय उपयोग की जाने वाली असंयमित भाषा सबसे

अधिक आपत्तिजनक और अपमानजनक है। उन्होंने अदालत से कहा कि उनके आवेदन की सुनवाई जनहित याचिका के साथ की जानी चाहिए क्योंकि यह पुलिस अधिकारियों की नियुक्ति और स्थानांतरण से संबंधित है। जांच में यह पाया गया कि यह मुख्य रूप से उनके स्थानांतरण से संबंधित था। इस प्रकार, उन्होंने अदालत के समक्ष गलत बयान दिया। तब उन्होंने कहा कि वह एक संरक्षित कर्मचारी सदस्य थे और उन्हें स्थानांतरण से प्रतिरक्षा थी और उन्हें छुआ नहीं जा सकता था। उन्होंने अपने मामले की सिफारिश करते हुए मुख्यमंत्री को संबोधित एक कैबिनेट मंत्री के पत्र को पेश करके अदालत को परेशान करने की कोशिश की। अदालत इस आचरण की निंदा करती है। [कंडिका 9 और 18] (593-एफ-जी; 594-बी-सी; 601-बी]

1.3 अपीलार्थी ने कोई पश्चाताप नहीं दिखाया। उन्होंने कोई माफी नहीं मांगी, लेकिन अपनी अभद्रता अदालत में चिल्लाने और अदालत को फँसाने का व्यवहार जारी रखा। इस व्यवहार से उन्होंने उच्च न्यायालय की गरिमा और अधिकार को कम कर दिया। उन्होंने उच्च न्यायालय की महिमा का घोर अनादर करते हुए उसे चुनौती दी। निस्संदेह, उन्होंने उच्च न्यायालय की उपस्थिति और सुनवाई में उसकी अवमानना की। इसलिए, वह उच्च न्यायालय के समक्ष अवमानना करने का दोषी है। उसका मामला है न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 14। [कंडिका 9) [594-घ-ङ] के अंतर्गत आता है।

रणवीर यादव बनाम बिहार राज्य 2010 (6) एससीआर 1073 = (2010) 11 एससीसी 493; प्रीतम पाल बनाम मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर, द्वारा निबंधक 1993 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 529 और प्रकाश सिंह और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य 2006 (6) पूरक। एस. सी. आर. 473 = (2006) 8 एसीसी 1-पर निर्भर।

संदर्भः विनय चंद्र मिश्रा 1995 (2) एस. सी. आर. 638 = (1995) 2 धारा 584-संदर्भित।

1.3 जब उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के समक्ष अप्रसन्न करने या अपमान करने के लिए अवमानना की जाती है। न्यायाधीश को अपमानित करने के लिए तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता हो सकती है। यदि अदालतें इस तरह की अवमानना से सख्ती से नहीं निपटती हैं, तो इसके परिणामस्वरूप संस्था को बदनाम किया जा सकता है जिससे जनता की नजर में इसकी गरिमा कम हो जाती है। उस विश्वास के क्षरण को रोकने के लिए, अदालत के सामने की गई अवमानना के लिए सख्त व्यवहार की आवश्यकता होती है। चूंकि अवमानना घोर थी और यह उच्च न्यायालय के सामने की गई थी, इसलिए उच्च न्यायालय के सम्मान और गरिमा को बनाए रखने के लिए कार्रवाई न्यायाधीशों को तत्काल कार्रवाई करनी पड़ी। अपीलार्थी को अपना बचाव करने का कोई अवसर देने का कोई सवाल ही नहीं था। [कंडिका 14) [597-डी-जी]

लैला डेविड (6) बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 2009 (15) एस. सी. आर. 317 = (2009) 10 धारा 337-पर निर्भर था।

2.1 इस न्यायालय में भी अपीलार्थी का व्यवहार संतोषजनक नहीं है। उन्होंने इस अदालत के समक्ष कहा कि उन्होंने उच्च न्यायालय में जमानत के लिए आवेदन दायर किया था, लेकिन उच्च न्यायालय ने इस पर विचार नहीं किया। उच्च न्यायालय के अभिलेख में कोई जमानत याचिका नहीं है। विवादित आदेश के साथ छेड़छाड़ और भी बदतर है। इस न्यायालय में दायर किए गए विवादित आदेश की प्रति में, 'चिल्लाया' शब्द को 'चिल्लाया नहीं' शब्दों से बदलकर, अपीलार्थी ने अपने मामले के अनुरूप सजा का पूरा अर्थ बदल दिया है कि उसने अदालत में चिल्लाया नहीं था। इस प्रकार, वह उच्च न्यायालय के आदेश के साथ छेड़छाड़ करने और इसे इस न्यायालय में दायर करने का दोषी है। यह आपराधिक अवमानना होगी। जैसा कि न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (ग) के तहत परिभाषित है। इसके अलावा, इस न्यायालय में अपीलार्थी ने एक झूठा हलफनामा दायर किया है। यह इस न्यायालय की अवमानना है। इस अदालत में भी उन्होंने ऐसा क्षमा याचना नहीं किया। [कंडिका 14,15 और 17] [597-जी, 598-बी, ई-जी; 600-जी]

चंद्र शशि बनाम अनी/कुमार वर्मा 1994 (5) पूरक एस. सी. आर. 465 = (1995) 1 एस. सी. सी. 421; पुनः संदर्भबिनीत कुमार सिंह 2001 (3) एस. सी. आर. 424 = (2001) 5 एस.सी.सी. 501-पर निर्भर

2.2 यह नहीं कहा जा सकता है कि चूंकि प्रतिवादियों ने हलफनामा दायर नहीं किया है, इसलिए अपीलार्थी का मामला अप्रमाणित है। अवमानना का मामला अनिवार्य रूप से अवमाननाकर्ता और अदालत के बीच होता है। अभिलेख के आधार पर और परिवेशक परिस्थितियों में, अदालत को यह तय करना होता है कि कोई अवमानना है या नहीं।मामले के तथ्य कड़वे है। अवमानना उच्च न्यायालय के सामने है। तथ्य यह है कि प्रतिवादियों ने जवाब में हलफनामा दायर नहीं किया है, यह अपीलार्थी द्वारा की गई अवमानना को कम नहीं करता है। [कंडिका 19] [601-सी-ई]

2.3 इसलिए, इस न्यायालय का विचार है कि उच्च न्यायालय को अदालत की अवमानना के लिए अपीलार्थी को दंडित करने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। आक्षेपित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। जहाँ तक अपीलार्थी द्वारा की गई इस न्यायालय की अवमानना का संबंध है, उसे Rs. 25,000/- का जुर्माना देने का निर्देश दिया जाता है, जिसमें विफल रहने पर उसे सात दिनों के लिए साधारण कारावास का सामना करना पड़ेगा। [कंडिका 20] [601-एफ-जी]

मामला कानून संदर्भ

2009 (15) एससीआर 317	कंडिका 8	पर भरोसा किया
1995 (2) एससीआर 638	कंडिका 10	संदर्भित
2010 (6) एससीआर 1073	कंडिका 11	पर भरोसा किया
1993 पूरक (1) एस. सी. सी. 529	कंडिका 12	पर भरोसा किया
1994 (5) पूरक एससीआर 465	कंडिका 15	पर भरोसा किया

2001 (3) एससीआर 424	कंडिका 16	पर भरोसा किया
2006 (6) पूरक एससीआर 473	कंडिका 18	पर भरोसा किया

आपराधिक अपीलीय न्यायाधिकार: आपराधिक अपील सं. 1240/2004

2003 के दीवानी याचिका अधिकारिता वाद संख्या- 1311/2003 में पटना में उच्च क्षेत्राधिकार की खंडपीठ के दिनांक 27.01.2004 के निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थी व्यक्तिगत रूप से।

सिद्धार्थ लूथरा, एएसजी (ए. सी.), आनंदना हांडा, आदित्य सिंगला, सुप्रिया जुनेजा, प्रेरणा सिंह, गोपाल सिंह प्रतिवादियों के लिए।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्तिगण रंजना प्रकाश देसाई एवं मदन बी. लोकुर, द्वारा दिया गया था।

निर्णय

1. बिहार व्यावसायिक संघर्ष मोर्चा एवं एक अन्य द्वारा 2003 की दीवानी परमादेश क्षेत्राधिकार वाद संख्या 1311 के रूप में पटना उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की गई थी और बिहार राज्य में कानून और व्यवस्था की समस्या से संबंधित कई मुद्दों को उठाया गया था। बिहार राज्य, बिहार के पुलिस महानिदेशक और अन्य को पक्षकार प्रतिवादी बनाया गया था। अन्य बातों के साथ-साथ उठाए गए मुद्दे थे कि क्या प्रतिवादी कर्तव्यबद्ध थे कि राज्य के उचित विकास के लिए सुरक्षित और स्वस्थ वातावरण प्रदान करना या नहीं और क्या प्रत्यर्थियों की निष्क्रियता भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 और 20 के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। याचिकाकर्ता ने अन्य बातों के साथ-साथ प्रत्यर्थियों को अधिकारियों और पुलिसकर्मियों द्वारा दुकानदारों, डीलरों, कारीगरों, मजदूरों और औद्योगिक इकाइयों का शोषण रोकने के उपाय करने का निर्देश देने की मांग की।

2. उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किए जिसके अनुसरण में उन्होंने शपथ पत्र दाखिल किए।14 अगस्त, 2003 को उच्च न्यायालय ने पुलिस महानिदेशक को निर्देश दिया कि वे स्टेशन हाउस अधिकारियों से लेकर अपर पुलिस महानिदेशक तक के उन अधिकारियों की सूची बनाएं, जो चार वर्षों से अधिक समय से अपने स्टेशन में बने हुए हैं।उच्च न्यायालय के आदेश के प्रासंगिक पैराग्राफ को उद्धृत किया जा सकता हैः

> "न्यायालय ने अंतरिम कार्रवाई के रूप में निम्नलिखित उपायों का सुझाव दिया हैः
>
> (ए) पुलिस महानिदेशक को उन अधिकारियों की एक सूची तैयार करने दें जो स्टेशन हाउस ऑफिसर से लेकर अपर पुलिस महानिदेशक तक के हैं, जो अपने स्टेशन में एक वर्ष से अधिक समय से रह रहे हैं। इस डोजियर को सेवा रिकॉर्ड से यह जानकारी दी जाएगी कि अपने पूरे करियर के दौरान कौन सा अधिकारी किस स्टेशन पर और कितने समय तक रहा। जो अधिकारी चार वर्षों से अधिक समय तक एक ही स्टेशन पर रहे हैं, उन्हें आज से छह सप्ताह के भीतर बाहर की पोस्टिंग देखनी होगी। ये पुलिस महानिरीक्षक के रैंक से नीचे के अधिकारी होंगे। एसएचओ के नीचे जो कर्मचारी किसी विशेष स्टेशन पर तीन साल से अधिक समय तक रहे हैं, उनकी पहचान संबंधित जिले के पुलिस प्रमुखों द्वारा की जाएगी और उनकी आवाजाही पुलिस महानिदेशक द्वारा की जाएगी।
>
> यह उल्लेख किया जाना चाहिए कि चार वर्षों की अवधि निर्धारित की गई है क्योंकि सरकारी सेवा के सामान्य क्रम में, अधिकारियों के लिए स्थानांतरण और पोस्टिंग की जाती है यदि वे तीन वर्षों से अधिक समय से किसी विशेष स्टेशन पर हैं। यह आदेश स्पष्ट रूप से पुलिस महानिदेशक को किसी भी प्रकार का

तबादला करने से नहीं रोकता है, यदि कोई अधिकारी कम अवधि के लिए किसी पद पर रहा हो, जो सामान्य प्रशासनिक शक्तियों के भीतर है।"

3. दिसंबर, 2003 में, अपीलार्थी, जो पुलिस उपाधीक्षक, अपराध अन्वेषण विभाग (सीआईडी), बिहार का पद धारण कर रहा था, ने 2003 की आईए संख्या 5588 के रूप में एक हस्तक्षेप आवेदन दायर किया। अपीलकर्त्ता ने अपने आवेदन में दावा किया कि वह बिहार पुलिस सेवा संघ के अध्यक्ष थे बिहार पुलिस सेवा के सदस्यों का सेवा संघ। उन्होंने आवेदन में कहा कि बिहार पुलिस सेवा के अधिकारियों के तबादले और तैनाती मनमाने ढ़ंग से यह बिहार सरकार के गृह विभाग द्वारा तैयार किए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों का उल्लंघन कर की गई है। अपीलार्थी ने कथित मार्गदर्शक सिद्धांतों को लागू करने के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश देने वाले एक आदेश के लिए बिहार राज्य के खिलाफ 1999 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 12225 के रूप में अपने द्वारा दायर एक रिट आवेदन का उल्लेख किया। उसने कहा कि उक्त रिट आवेदन पिछले चार वर्षों से उच्च न्यायालय में लंबित है जिसके दौरान सरकार ने उसे दुर्भावनापूर्ण रूप से पीड़ित करने की कोशिश की है। उन्होंने आगे कहा कि उनके आवेदन पर 2003 की सी डब्ल्यू जे सी संख्या 1311 के साथ सुनवाई की जानी चाहिए। इसलिए उसने प्रार्थना की कि उसे 2003 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 1311 में अभियोजित किया जाए।

4. यह स्वीकार किया जाता है कि अपीलकर्ता कई वर्षों से पटना में तैनात है।कई आदेशों से यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने इस मामले में पारित किया है कि बिहार में कानून और व्यवस्था की स्थिति के सवाल पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय पुलिस अधिकारियों की तैनाती और स्थानांतरण की राज्य सरकार की नीति पर विचार कर रहा था, जाहिर है क्योंकि इसका पुलिस अधिकारियों की दक्षता और ईमानदारी पर सीधा प्रभाव पड़ता है। उच्च न्यायालय ने महाधिवक्ता का बयान भी दर्ज किया कि पुलिस अधिकारियों के कुछ तबादले किए जा रहे हैं। अपीलार्थी उच्च न्यायालय द्वारा किए गए कार्य से नाखुश और परेशान था। यह उनके हस्तक्षेप आवेदन

के पहले पैराग्राफ से स्पष्ट है, जहां उन्होंने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का उल्लेख किया है, जिसमें प्रत्यर्थियों को उन अधिकारियों की सूची सौंपने का निर्देश दिया गया है, जिन्हें चार साल से अधिक समय से उनके पद से नहीं हटाया गया है। यही कारण है कि उन्होंने 2003 के सीडब्ल्यूजेसी नंबर 1311 में हस्तक्षेप किया।

5. अपीलार्थी चाहता था कि पटना उच्च न्यायालय में लंबित उसके रिट आवेदन की सुनवाई 2003 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 1311 के साथ की जाए। इसलिए हमने उस याचिका का सावधानीपूर्वक अध्ययन किया है। अपीलकर्ता यह प्रभाव पैदा करना चाहता है कि वह बिहार के पुलिस अधिकारियों के लिए लड़ रहा है, लेकिन उसके आवेदन को सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि वह अपने स्वयं के कारण का समर्थन कर रहा है.उन्होंने कहा है कि वह कैबिनेट सतर्कता विभाग में लगातार सात वर्षों से तैनात हैं। उन्होंने कहा है कि आपराधिक जांच विभाग में उनकी पोस्टिंग गलत है और उन्हें पटना में कहीं भी या किसी अन्य उचित कार्यालय जैसे कि पटना के यातायात या परिवहन विभाग में अनुमंडल पुलिस अधिकारी के रूप में तैनात किया जाना चाहिए ताकि वह सरकारी ड्यूटी कर सकें और बिहार पुलिस सेवा संघ के अध्यक्ष के रूप में जिम्मेदारी संभाल सकें। हम थोड़ी देर बाद इस सेवा संघ को बताएंगे, लेकिन इस स्तर पर यह कहना पर्याप्त होगा कि अपीलकर्ता का लंबित रिट आवेदन उसकी पोस्टिंग पर केंद्रित है और वह प्रार्थना खंड में भी सम्मिलित है।

6. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि 27/01/2004 को अपीलार्थी उच्च न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ। उन्होंने चिल्लाते हुए अदालत को बताया कि वह हस्तक्षेप कर रहे हैं और उच्च न्यायालय ने पुलिस विभाग के भीतर तबादलों की गलत नीतियों पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं किया है। उन्होंने अशिष्टता के साथ अपनी आवाज उठाई और घोषणा की कि उच्च न्यायालय उनका मामला नहीं ले रहा है जिसमें उन्होंने पुलिस विभाग में अपने तबादले और तैनाती को चुनौती दी है।तब विद्वत न्यायाधीशों ने उनसे पूछा कि क्या उन्हें अपना मामला पेश करने के लिए पुलिस महानिदेशक द्वारा अनुमति दी गई थी। वह फिर से

अदालत पर चिल्लाया और कहा कि उसने अनुमति के लिए आवेदन किया था, लेकिन क्या अनुमति उसे दिया गया है या नहीं, यह अदालत का सरोकार नहीं है। उच्च न्यायालय ने कहा है कि वह अदालत को यह नहीं दिखा सके कि पुलिस मुख्यालय ने उन्हें मामले में व्यक्तिगत रूप से बहस करने और पुलिस विभाग की स्थानांतरण नीति को चुनौती देने के लिए अनुमति दी थी। उच्च न्यायालय ने यह भी कहा है कि अपीलार्थी ने न्यायालय कोो प्रलोभन दिया है। वह चाहते थे कि उनके रिट आवेदन के बिना इस आधार पर विचार किया जाए कि यह पुलिस अधिकारियों के स्थानांतरण और पोस्टिंग से संबंधित है। उच्च न्यायालय ने, इसलिए, अभिलेख मंगाया, अपीलार्थी के आवेदन का परिशीलन किया और पाया कि यह मुख्य रूप से उसके अपने स्थानांतरण से संबंधित है।अपीलार्थी ने, तब, बिहार पुलिस सेवा संघ का पदाधिकारी होने का दावा किया और कहा कि पुलिस मैनुअल ने उसे संरक्षित कर्मचारी का सदस्य घोषित किया है और उसे स्थानांतरण से छूट प्राप्त है और उसे छुआ नहीं जा सकता है। उन्होंने बिहार के मुख्यमंत्री को एक कैबिनेट मंत्री द्वारा संबोधित एक पत्र प्रस्तुत किया जिसमें पूछा गया था कि उन्हें शहर के भीतर एक प्रतिष्ठान से दूसरे प्रतिष्ठान में क्यों स्थानांतरित किया गया था। कथित पत्र को आक्षेपित आदेश में उद्धृत किया गया है। आक्षेपित आदेश से ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने थोड़ा सा भी न तो अनुताप हुआ और न ही पछतावा हुआ और इसके बजाय उन्होंने अदालत को टोकना जारी रखा और दोहराया कि मंत्री ने भी उन्हें संरक्षण दिया था और उनके तबादले पर रोक लगा दी थी। इस धूर्त व्यवहार को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने निर्देश दिया कि अपीलकर्ता को न्यायालय अधिकारी और सार्जेंट द्वारा हिरासत में लिया जा सकता है और एक दिन के लिए अर्थात् चौबीस घंटे के लिए जेल भेजा जा सकता है। उनका हस्तक्षेप आवेदन अस्वीकार कर दिया गया। इस आदेश से व्यथित, अपीलार्थी ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

7. अपीलार्थी व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ।इस मामले के महत्व को देखते हुए हमने अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री सिद्धार्थ लूथरा से हमारी सहायता करने का अनुरोध किया। हमेशा की तरह, श्री लूथरा ने इस न्यायालय को उल्लेखनीय

सहायता प्रदान की है। हमने कुछ समय तक अपीलकर्ता को सुना।उन्होंने कहा कि वह अदालत की अवमानना के दोषी नहीं हैं। उसने प्रस्तुत किया कि वह न्यायालय के लिए सर्वोच्च सम्मान रखता है और उसने कभी भी अदालत में चिल्लाया नहीं, जैसा कि आपेक्षित आदेश में कहा गया है। उन्होंने कहा कि वह बिहार पुलिस सेवा संघ के अध्यक्ष हैं और पुलिस अधिकारियों के हितों की रक्षा सामान्य रूप से कर रहे हैं। न्यायालय द्वारा यह पूछे जाने पर कि क्या बिहार पुलिस सेवा संघ एक पंजीकृत सोसायटी है या इसे कोई मान्यता मिली है, उन्होंने कहा कि इस संबंध में आवेदन लंबित है।हालांकि बिहार पुलिस सेवा संघ को अभी तक कोई मान्यता नहीं मिली है। उन्होंने कहा कि प्रत्यर्थियों ने जवाब में कोई हलफनामा दायर करके उनके किसी भी दावे का खंडन नहीं किया है.उन्होंने हमारा ध्यान अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 14 की ओर दिलाया और कहा कि जैसा कि इसमें अनुध्यात है, उन्हें अपना बचाव करने का कोई अवसर नहीं दिया गया। उन्होंने कहा कि उन्होंने जमानत के लिए आवेदन किया है।हालांकि, इस पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया। उन्होंने आगे कहा कि उच्च न्यायालय ने उन पर अनावश्यक रूप से आरोप लगाए हैं। उन्होंने आग्रह किया कि आक्षेपित आदेश को रद्द किया जा सकता है।

8. दूसरी ओर, श्री लूथरा, विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल ने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता उच्च न्यायालय के समक्ष अवमानना का दोषी है और उसका मामला लीला डेविड (6) बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य इस न्यायालय के निर्णय के अंतर्गत आता है जहां इस न्यायालय ने कहा है कि जब कोई अवमाननाकर्ता अपमानजनक भाषा का उपयोग करके अदालत की कार्यवाही में बाधा डालता है, तो उसे दंडित करने के लिए संक्षिप्त कार्यवाही को अपनाने की अनुमति है। श्री लूथरा ने आगे प्रस्तुत किया कि अपीलार्थी ने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए जनहित याचिका के साथ अपने व्यक्तिगत आवेदन को टैग करने की कोशिश की और उसने अदालत को आतंकित करने के लिए एक कैबिनेट मंत्री के पत्र का उपयोग किया। इसके अलावा, उसने इस न्यायालय में आक्षेपित आदेश की गलत प्रति प्रस्तुत की। उन्होंने दावा किया कि जब रिकॉर्ड में इस तरह का कोई आवेदन नहीं पाया गया तो उन्होंने जमानत याचिका

दायर की थी। उसने इस न्यायालय में दाखिल हलफनामे में दिए गए वचन का उल्लंघन किया है। श्री लूथरा ने प्रस्तुत किया कि ऐसे व्यक्ति के प्रति कोई नरमी नहीं दिखाई जानी चाहिए और इसलिए अपील खारिज की जा सकती है।

9. हमने एक उद्देश्य के साथ उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश की सामग्री का व्यापक रूप से उल्लेख किया है।यह अपीलकर्ता के अशिष्ट व्यवहार को दर्शाता है। उच्च न्यायालय के विद्वत न्यायाधीशों को संबोधित करते समय अपीलार्थी द्वारा उपयोग की गई असंयमी भाषा उच्च न्यायालय सबसे आपत्तिजनक और अक्खड़ है। अपीलकर्ता पुलिस उपाधीक्षक है।वह बिहार पुलिस सेवा संघ का अध्यक्ष होने का दावा करता है।एक जिम्मेदार पुलिस अधिकारी से यह उम्मीद नहीं की जाती है कि वह अदालत में इस तरह का अशोभनीय और अभद्र व्यवहार करे। वह न्यायाधीशों पर चिल्लाया। जब उनसे पूछा गया कि क्या पुलिस मुख्यालय ने उन्हें उनके मामले में व्यक्तिगत रूप से बहस करने और पुलिस विभाग की स्थानांतरण नीति को चुनौती देने के लिए कोई अनुमति दी है, तो उन्होंने अशिष्टता से कहा कि यह अदालत की चिंता का विषय नहीं है। हालांकि, वह किसी भी अनुमति को प्रस्तुत प्रस्तुत में असमर्थ थे। इसके बाद, उन्होंने अदालत से कहा कि उनके आवेदन पर जनहित याचिका के साथ सुनवाई की जानी चाहिए क्योंकि यह पुलिस अधिकारियों की पोस्टिंग और स्थानांतरण से संबंधित है। जांच में यह पाया गया कि यह मुख्य रूप से उनके स्थानांतरण से संबंधित है। इस प्रकार, उसने न्यायालय के समक्ष एक गलत बयान दिया। इसके बाद उसने कहा कि वह एक संरक्षित कर्मचारी है और उसके पास स्थानांतरण से छूट है और उसे छुआ नहीं जा सकता। उन्होंने अपने मामले की सिफारिश करते हुए मुख्यमंत्री को संबोधित एक कैबिनेट मंत्री का पत्र पेश करके अदालत को आतंकित करने की कोशिश की। उन्होंने कोई पछतावा नहीं दिखाया। उन्होंने कोई माफी नहीं मांगी, लेकिन अपनी बात जारी रखी। अदालत पर चिल्लाने और अदालत को गाली देने का अभद्र व्यवहार जारी रखी। इस व्यवहार से उन्होंने उच्च न्यायालय की गरिमा और प्राधिकार को कम किया।उन्होंने उच्च न्यायालय के प्रति अनादर दिखाते हुए उसकी गरिमा को चुनौती दी। इसमें कोई संदेह नहीं कि उन्होंने उच्च न्यायालय की उपस्थिति

और सुनवाई के दौरान उसकी अवमानना की। इसलिए वह उच्च न्यायालय के सामने अवमानना करने का दोषी है। उनका मामला अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 14 के अंतर्गत उचित रुप से आता है।

10. पुनःविनय चंद्र मिश्रा, एक प्रश्न पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश द्वारा, अवमाननाकर्ता, जो एक अधिवक्ता था, न्यायाधीश पर चिल्लाना शुरू कर दिया और उसे बताया कि सवाल उससे नहीं पूछा जा सकता था और वह न्यायाधीश का स्थानांतरण करवाएगा या देखेगा कि उसके खिलाफ महाभियोग प्रस्ताव संसद में लाया गया है। उन्होंने इस तरह की और भी अपमानजनक टिप्पणियां कीं। विद्वत न्यायाधीश ने कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश को इस घटना के बारे में एक पत्र लिखा। कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश ने उस पत्र को तत्कालीन भारत के मुख्य न्यायाधीश को भेज दिया। इस पर अदालत ने इस विचार के साथ अधिवक्ता को नोटिस जारी किया कि अदालत की आपराधिक अवमानना का प्रथम दृष्टया मामला बनता है। इस न्यायालय ने उक्त अवमानना को उच्च न्यायालय के समक्ष की गई आपराधिक अवमानना के रूप में माना और अधिवक्ता को सजा सुनाई। अवमाननाकर्ता के आचरण पर टिप्पणी करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः

> “न्यायाधीश द्वारा पूछे गए प्रश्नों पर नाराजगी व्यक्त करना, उनके प्रति अनादर करना, सवाल पूछने के उनके अधिकार पर सवाल उठाना, उन पर चिल्लाना, उन्हें स्थानांतरण और महाभियोग की धमकी देना, अपमानजनक भाषा का उपयोग करना और उन्हें गाली देना, आदेश देना कि उन्हें पारित करना चाहिए, अदालत में दृश्य बनाना, गुस्से में आकर उन्हें संबोधित करना सभी कार्य न्याय के मार्ग में हस्तक्षेप करना और बाधा डालना हैं।ऐसे कार्य न्यायालय को भयभीत करते हैं और उसे न्याय प्रदान करने के अपने कर्तव्य का निर्वहन करने से रोकते हैं। इस तरह के आचरण से न्यायालय के प्राधिकार और न्याय प्रशासन का अनादर और अपमान होता है

> और स्वतंत्र और निष्पक्ष न्याय प्रदान करने की अदालत की क्षमता में लोगों के विश्वास को झकझोर कर न्यायपालिका की नींव को कमजोर करता है।"
>
> इस न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियों का वर्तमान मामले पर प्रभाव है.

11. रणवीर यादव बनाम बिहार राज्य वाले मामले में अपीलकर्ता और अन्य अवमाननाकर्ताओं ने आक्रामक रूप से तीखे शब्दों का आदान-प्रदान करके अदालत की कार्यवाही को बाधित किया और अदालत में अरुचिकर दृश्यों का निर्माण किया। अदालत की मर्यादा और गरिमा को इतना अधिक खतरा था कि न्यायाधीश को ऊपर उठने के लिए मजबूर होना पड़ा। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी के आपत्तिजनक कार्य न्यायालय के समक्ष अवमानना हैं। प्रासंगिक पैराग्राफ उद्धृत किया जा सकता है।

> "अपीलकर्ता के अपमानजनक कार्य अदालत के सामने अवमानना का काम करते हैं।जब अदालत के सामने अवमानना होती है, तो न्याय के प्रशासन में लोगों के विश्वास को गहरा झटका लगता है और बहुमूल्य न्यायिक समय बर्बाद हो जाता है। इसलिए, अपीलार्थी के अपमानजनक कार्य निश्चित रूप से न्यायिक कार्यवाही के उचित अनुक्रम में हस्तक्षेप के दायरे में आते हैं और अदालत के सामने आपराधिक अवमानना का स्पष्ट मामला हैं।"

12. अपीलार्थी का यह तर्क कि उसे अपनी प्रतिरक्षा करने का कोई अवसर नहीं दिया गया था, खारिज किया जाना चाहिए। इसके प्रीतम पाल बनाम मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर, रजिस्ट्रार के माध्यम से इस न्यायालय को प्रदत्त शक्ति की प्रकृति और व्याप्ति तथा उच्च न्यायालय, भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 और 215 के तहत क्रमशः रिकॉर्ड न्यायालय होने के नाते, इस न्यायालय ने कहा कि उक्त शक्ति एक अंतर्निहित शक्ति है जिसके तहत सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय अपने अवमानना से निपट सकते हैं। निहित क्षेत्राधिकार एक विशेष कानून है जो किसी

अन्य कानून से नहीं लिया गया है बल्कि केवल अनुच्छेद 129 और 215 से लिया गया है। इस न्यायालय ने आगे स्पष्ट किया कि अवमानना अधिनियम सहित कानून द्वारा संवैधानिक रूप से निहित अधिकार को न तो कम किया जा सकता है, न ही समाप्त किया जा सकता है और न ही उसमें कटौती की जा सकती है।

13. लीला डेविड (6) वाले मामले में इस न्यायालय ने चर्चा की है कि न्यायालय के समक्ष अवमानना क्या है। इस मामले में, याचिकाकर्ताओं ने रिट याचिका में असंगत आरोप लगाए और समर्थन में दिये गए हलफनामे में। उन्हें नोटिस जारी किए गए कि उनके खिलाफ अवमानना की कार्रवाई क्यों नहीं की जानी चाहिए। सुनवाई शुरू हुई।रिट याचिकाकर्ताओं ने बहुत अपमानजनक, असंयमी और निंदाजनक भाषा का उपयोग करके कार्यवाही को बाधित किया। एक याचिकाकर्ता ने कहा कि न्यायाधीशों के खिलाफ कार्रवाई शुरू करके जेल भेजा जाना चाहिए और न्यायाधीशों पर जूते फेंके। याचिकाकर्ताओं ने अदालत में जो कहा और किया, उस पर कायम रहे। एक विद्वान न्यायाधीश ने महसूस किया कि याचियों को नोटिस जारी करने की कोई आवश्यकता नहीं है और उन्हें अदालत के आपराधिक अवमानना का दोषी ठहराया। दूसरे विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि अवमानना करने वालों को जेल भेजने से पहले अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 14 के आदेश का पालन किया जाना चाहिए। इसलिए सवाल यह था कि क्या याचिकाकर्ता सुनवाई के किसी भी अवसर के हकदार थे। इसके बाद मामले को तीन न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष रखा गया। तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने मतभेदों को सुलझा लिया और निम्नलिखित टिप्पणी की:

> "अदालत की अवमानना अधिनियम की धारा 14 निःसंदेह नोटिस जारी करने और अवमानना करने वालों को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को संतुष्ट करने के लिए नोटिस में आरोपों का जवाब देने का अवसर प्रदान करती है। हालांकि, जहां तत्काल प्रकृति की कोई घटना विद्वान न्यायाधीशों की उपस्थिति और दृष्टि के भीतर होती है, तो यह अदालत के सामने अवमानना के बराबर है और घटना

के समय ही इससे निपटा जाना आवश्यक है। यह न्यायालयों की मर्यादा और गरिमा बनाए रखने के लिए आवश्यक है। जब किसी न्यायालय की कार्यवाही में पीठासीन अधिकारी पर जूते जैसी कोई वस्तु फेंकी जाती है तो उसका उद्देश्य केवल न्यायाधीश को बदनाम करना या अपमानित करना नहीं होता बल्कि संस्था को ही बदनाम करना और इस तरह जनता की नजरों में उसकी गरिमा को कम करना।"

14. इस प्रकार, जब न्यायाधीश को बदनाम करने या अपमानित करने के लिए उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के समक्ष अवमानना की जाती है, तो तत्काल कार्रवाई आवश्यक हो सकती है। यदि अदालतें इस तरह की अवमानना से सख्ती से नहीं निपटती हैं, तो इससे संस्था को बदनाम किया जा सकता है और इससे जनता की नजरों में इसकी गरिमा कम हो सकती है। अदालतें जनता के लिए होती हैं। अदालतें लोगों द्वारा उनमें व्यक्त किए गए विश्वास को संजो कर रखती हैं। उस विश्वास के क्षरण को रोकने के लिए, अदालत के सामने की गई अवमानना के साथ सख्त व्यवहार करने की आवश्यकता है। अपीलकर्ता, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा कहा गया था, पश्चातापी नहीं था.उन्होंने माफी मांगने के लिए कोई हलफनामा दायर नहीं किया और न ही उन्होंने उच्च न्यायालय को मौखिक रूप से बताया कि उन्हें पछतावा है और वह माफी मांगना चाहते हैं। इस अदालत में भी उन्होंने माफी नहीं मांगी है। इसलिए, चूंकि अवमानना गंभीर थी और यह उच्च न्यायालय के सामने की गई थी, इसलिए उच्च न्यायालय के सम्मान और गरिमा को बनाए रखने के लिए विद्वान न्यायाधीशों को तत्काल कार्रवाई करनी पड़ी। अपीलार्थी को अपना बचाव करने का कोई अवसर देने का कोई सवाल ही नहीं था। इसलिए, अपीलकर्ता के इस निवेदन को खारिज किया जाना चाहिए।

15. इस न्यायालय में भी अपीलार्थी का व्यवहार संतोषजनक नहीं है। उन्होंने हमें बताया कि उन्होंने उच्च न्यायालय में जमानत के लिए एक आवेदन दायर किया था, लेकिन उच्च न्यायालय ने इस पर विचार नहीं किया। याचिका के साथ संलग्नक-

ए/6 में संलग्न जमानत आवेदन पर हस्ताक्षर नहीं किए गए हैं और इसका समर्थन बिना हस्ताक्षर वाले हलफनामे में किया गया है, जिस पर वकील का नाम नहीं है। हमने उच्च न्यायालय के पूरे रिकॉर्ड को देखा है और हम पाते हैं कि रिकॉर्ड में कोई जमानत आवेदन नहीं है। इससे भी बदतर है आक्षेपित आदेश से छेड़छाड़। अपीलार्थी ने आक्षेपित आदेश की सही प्रति दाखिल नहीं की है.इस न्यायालय में दाखिल किए गए आक्षेपित आदेश की प्रति के पैराग्राफ 4 का पहला वाक्य इस प्रकार हैः

> "हस्तक्षेप करने वाला व्यक्ति जो स्वयं को व्यक्तिगत रूप से प्रस्तुत करता है अन्यथा एक पुलिस अधिकारी ने अदालत पर चिल्लाकर नहीं कहा कि वह इस मामले में हस्तक्षेप कर रहा है....."

तथापि, मूल आक्षेपित आदेश में उक्त वाक्य में 'चिल्लाया नहीं' शब्द नहीं हैं।इसका पठन इस प्रकार हैः

> "हस्तक्षेप करने वाला जो स्वयं को व्यक्तिगत रूप से प्रस्तुत करता है अन्यथा एक पुलिस अधिकारी न्यायालय पर चिल्लाया कि वह इस मामले में हस्तक्षेप करने वाला है....."

इस प्रकार, 'चिल्लाया नहीं' शब्दों ने 'चिल्लाया' शब्द को बदल दिया है। जब हमने स्पष्टीकरण के लिए कहा, तो अपीलकर्ता ने कहा कि कोई छेड़छाड़ नहीं है, लेकिन यह केवल एक टाइपिंग त्रुटियां है।हम इस स्पष्टीकरण को स्वीकार करने से इनकार करते हैं। इस मामले में, 'चिल्लाया' शब्द को 'चिल्लाया नहीं' शब्दों से बदलकर अपीलार्थी ने अपने मामले के अनुरूप वाक्य का पूरा अर्थ बदल दिया है कि उसने अदालत में चिल्लाया नहीं। इस प्रकार, वह उच्च न्यायालय के आदेश के साथ छेड़छाड़ करने और इसे इस न्यायालय में दायर करने का दोषी है। हमारी राय में यह अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (सी) द्वारा परिभाषित आपराधिक अवमानना होगी।इस मुद्दे पर इस न्यायालय के अनेक निर्णय हैं। इस न्यायालय ने ऐसे आचरण पर सख्त रुख अपनाया है। हम उपयोगी रूप से इसका उल्लेख कर सकते हैं चंद्र शशि बनाम अनिल कुमार वर्मा में जहां एक अवमाननाकर्ता ने नागपुर से एक कॉलेज के प्रिंसिपल

द्वारा कथित रूप से जारी एक फर्जी अनुभव प्रमाण पत्र दायर किया था। प्रिंसिपल ने यह कहते हुए हलफनामा दायर किया कि उक्त प्रमाण पत्र जाली है। इस न्यायालय ने पाया कि कोई कार्य जो न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करता है या बाधा डालता है, या बाधा डालने की कोशिश करता है, वह न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (सी) में परिभाषित रूप में आपराधिक अवमानना होगा। इस न्यायालय ने आगे कहा कि यदि झूठ का सहारा अप्रत्यक्ष उद्देश्य से लिया जाता है, तो यह निश्चित रूप से न्याय के प्रवाह को बाधित, बाधित या बाधित करेगा और अदालतों को अपने कानूनी कर्तव्यों का पालन करने से रोकेगा जैसा कि उनसे किया जाना चाहिए।इसलिए अवमाननाकर्ता को उचित सजा दी गई थी।

16. पुनःबिनीत कुमार सिंह 6 एक जाली/मनगढ़ंत इस न्यायालय के आदेश का उपयोग व्यक्तियों के एक समूह को कुछ लाभ प्रदान करने के उद्देश्य से किया गया था।इस न्यायालय ने इस मामले को गंभीरता से लिया और इस प्रकार मत व्यक्त किया:

> "न्यायालय की अवमानना का कानून अनिवार्य रूप से न्याय प्रशासन को शुद्ध एवं निष्कलंकित रखने के लिए है। अवमानना को सख्ती से परिभाषित करना मुश्किल है। जहां एक ओर, न्यायालय की गरिमा को हर कीमत पर बनाए रखना है, वहीं यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि अवमानना की अधिकारिता विशेष प्रकृति की है और इसका उपयोग बहुत कम किया जाना चाहिए। उच्चतम न्यायालय रिकॉर्ड का सर्वोच्च न्यायालय है और इसे न्यायालय की गरिमा की रक्षा करने के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का निर्वहन करना पड़ता है। देश में न्याय प्रशासन के संरक्षक के रूप में अपने दायित्व का निर्वहन करने के लिए और सभी निचले न्यायालयों और अधिकरणों पर पर्यवेक्षण और अपीलीय अधिकारिता के साथ उच्चतम न्यायालय के रूप में, इसे स्वाभाविक रूप से यह शक्ति सौंपी गई समझी जाती है कि देश में न्याय की धारा शुद्ध रहे, उसके

मार्ग में किसी भी तरह की बाधा या रुकावट न आए, कि न्याय भय या पक्षपात के बिना प्रदान किया जाए। इस दायित्व का निर्वहन करने के लिए उच्चतम न्यायालय को न्याय के मार्ग से भटकाव का संज्ञान लेना होगा। अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति रखने वाला न्यायालय का एकमात्र उद्देश्य हमेशा न्याय प्रशासन है। न्याय की अदालतों के लिए इससे ज्यादा जरूरी कुछ नहीं है कि वे अपनी कार्यवाही को गलत तरीके से पेश किए जाने से बचाएं और जब अदालत का आदेश जाली हो और अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए पेश किया जाए तो इससे ज्यादा खतरनाक कुछ नहीं है। धारा 2 (सी) में आपराधिक अवमानना को किसी भी तरह से न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप के रूप में परिभाषित किया गया है। किसी पक्षकार द्वारा अनुकूल आदेश प्राप्त करने के लिए कार्यवाही में जानबूझकर और सोच - समझकर दिया गया झूठा या भ्रामक या गलत बयान निस्संदेह न्यायिक कार्यवाही के सम्यक अनुक्रम में हस्तक्षेप के बराबर होगा। जब किसी व्यक्ति को अदालत के किसी आदेश का उपयोग करते हुए पाया जाता है, जिसे वह जानता है कि उन लोगों को लाभ प्रदान करने के लिए गलत है, जो इसके हकदार नहीं हैं, तो उस व्यक्ति द्वारा मनगढ़ंत आदेश का पूरी तरह से उपयोग किया जाना। संबंधित व्यक्ति को अवमानना का दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त होगा, भले ही वह स्वयं या स्वयं मनगढ़ंत का लेखक हो।"

हम इन टिप्पणियों से सम्मानपूर्वक सहमत हैं।

17. अब हम अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय में दाखिल किए गए हलफनामे पर गौर करेंगे। उसने एक हलफनामा दिया है जिसमें कहा गया है कि आपराधिक अपील के अनुलग्नक मूल दस्तावेजों की सही प्रतियां हैं और आपराधिक अपील में बताए गए तथ्य उसकी जानकारी में सही हैं। जैसा कि हमने पहले ही उल्लेख किया है,

अपीलार्थी ने मूल आक्षेपित आदेश के साथ छेड़छाड़ की है। उन्होंने कहा कि उन्होंने उच्च न्यायालय में जमानत याचिका दायर की थी। इस न्यायालय में दाखिल कथित जमानत आवेदन की प्रति हस्ताक्षरित नहीं है और बिना हस्ताक्षरित हलफनामे द्वारा समर्थित है जिसमें वकील का कोई नाम नहीं है। अपीलार्थी ने अपील में पटना उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार को पक्षकार नहीं बनाया है। रजिस्ट्रार स्पष्ट कर सकता था कि क्या कोई जमानत आवेदन, वास्तव में, अपीलार्थी द्वारा दायर किया गया था। किसी भी मामले में, हमने रिकॉर्ड का अवलोकन किया है और हम पाते हैं कि रिकॉर्ड में इस तरह का कोई जमानत आवेदन नहीं है। इस प्रकार, इस न्यायालय में अपीलार्थी ने एक झूठा हलफनामा दायर किया है। यह इस न्यायालय की अवमानना है।

18. इस मामले की एक और बहुत ही परेशान करने वाली विशेषता यह है कि जिस तरह से अपीलकर्ता उच्च न्यायालय में फला-फूला, एक कैबिनेट मंत्री ने अपने मामले की सिफारिश करते हुए मुख्यमंत्री को संबोधित पत्र लिखा। हम इस मामले में मुख्यमंत्री को इस तरह के पत्र को संबोधित करने में कैबिनेट मंत्री के औचित्य पर टिप्पणी नहीं करना चाहते, हालांकि इस न्यायालय ने प्रकाश सिंह और अन्यबनाम भारत संघ और अन्य मामले में पुलिस को राजनीतिक हस्तक्षेप से बचाने की कोशिश की गई।किसी भी मामले में, अपीलकर्ता को उक्त पत्र प्रस्तुत करके उच्च न्यायालय को आतंकित करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए थी। हम इस आचरण की निंदा करते हैं। हम भी हैरान थे जब हमें बताया गया कि अपीलकर्ता बिहार पुलिस सेवा संघ का अध्यक्ष है। तथापि, हमें सूचित किया जाता है कि बिहार राज्य में पुलिस अधिकारियों को भी ऐसे संघ की सदस्यता की अनुमति है। हालांकि, तथ्य यह है कि उक्त एसोसिएशन पंजीकृत नहीं है।

19. अपीलार्थी का यह तर्क कि चूंकि प्रत्यर्थियों ने हलफनामा दायर नहीं किया है, इसलिए उसके मामले को बिना किसी योग्यता के खंडन नहीं किया गया है। अवमाननाकर्ता और अदालत के बीच अवमानना का मामला है। रिकॉर्ड और विद्यमान परिस्थितियों के आधार पर अदालत को यह तय करना है कि कोई अवमानना हुई है या नहीं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रतिवादी एक हलफनामा दायर कर सकते थे,

लेकिन केवल इसलिए कि कोई हलफनामा नहीं है, अवमाननाकर्ता अपने दायित्व से बच नहीं सकता है.मामले के तथ्य कड़वे हैं। यह अवमानना उच्च न्यायालय के समक्ष है। यह तथ्य कि प्रत्यर्थियों ने जवाब में हलफनामा दायर नहीं किया है, अपीलार्थी द्वारा की गई अवमानना को कमजोर नहीं करता है।

20. अंतिम विश्लेषण में हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय को अदालत की अवमानना के लिए अपीलकर्ता को दंडित करने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। आक्षेपित आदेश के साथ किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। हम अपीलार्थी द्वारा की गई इस न्यायालय की अवमानना से भी चिंतित हैं। हम अपीलकर्ता को 25,000 रुपये का जुर्माना अदा करने का निर्देश देते हैं। जुर्माना आज से चार सप्ताह के भीतर उच्चतम न्यायालय की विधिक सेवा समिति के पास जमा किया जाएगा, ऐसा न करने पर अपीलकर्ता को सात दिनों के लिए साधारण कारावास भुगतना पड़ेगा। अपीलार्थी द्वारा जमा की गई राशि का उपयोग किशोर न्याय से संबंधित मुद्दों के लिए किया जा सकता है।

21. अपील का निपटान उपर्युक्त निबंधनों में किया जाता है।

(रंजना प्रकाश देसाई), न्यायमूर्ति

(मदन बी. लोकुर), न्यायमूर्ति

नई दिल्ली,

31 मार्च, 2014

खण्डन (डिस्क्लेमर) :– स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।